मनुस्मृति अध्याय सप्तम श्लोक संख्या 51–100

डॉ वर्चस्काम शर्मा

सहायकाचार्य,

राजकीय कन्या महाविद्यालय कठुआ

पाठ परिचय– *सभी स्मृतिग्रन्थ (धर्मशास्त्र) आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त इन तीन विभागों में विभक्त हैं। इन सबका वर्णन काव्यमयी भाषा में किया गया है। स्मृतिप्रमाण से श्रुति (वेद) का प्रमाण श्रेष्ठतर माना गया है। मनुस्मृति मनुष्यजाति के प्रथम पुरुष भगवान् मनु द्वारा रचित है। इस ग्रन्थमें चार आश्रमधर्मों के कर्त्तव्य एवं अकर्त्तव्यों का वर्णन, व्यवहार नियम, राजनैतिक व्यवस्था, दण्डविधान और पापों के प्रायश्चित्त श्लोकों के रूप में उपलब्ध होते हैं। इस ग्रन्थ की दस से अधिक टीकाएँ मिलती हैं। उनमें कुल्लूकभट्ट(1200 ई0) और मेधातिथि (850 ई0) की टीका प्रसिद्ध हैं।*

मनुस्मृति के सप्तमाध्याय में राजधर्म अर्थात् राजा और उसके द्वारा पालन किये जाने वाले नियमों तथा नीतियों का वर्णन किया गया है। यथा– राजा के आचरणीय धर्म, मन्त्रियों की नियुक्ति तथा मन्त्रिपरिषद् से सलाह लेने की रीति, राजदूतों की ईमानदारी की परीक्षा, दुर्गरचना आदि।

दण्डस्य पातनं चैव वाक्पारुष्यार्थदूषणे।

क्रोधजेऽपि गणे विद्यात् कष्टमेतत् त्रिकं सदा।।51।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ क्रोधज गण के अन्तर्गत आने वाले त्रिक (तीन बातों)के परिणाम को राजा के लिए बहुत ही कष्टदायक बताया गया है।

व्याख्या– क्रोधज गण (क्रोधसे पैदा होने वाले व्यसनों) में मारपीट, कठोर वचन, दूसरे की धनहानि करना ये तीन बडे ही दुःखदायी होते है, ऐसा जानना चाहिए।

सप्तकस्यास्य वर्गस्य सर्वत्रैवानुषंगिणः।

पूर्वं पूर्वं गुरुतरं विद्याद् व्यसनमात्मवान्।।52।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ सात प्रकार के दुर्गुणों (व्यसनों) के वर्ग में पहले–पहले व्यसन को अधिक कष्टप्रद माना गया है।

व्याख्या– शराब पीना, जुआ खेलना, स्त्रियों में आसक्ति, मृगया(शिकार खेलना), दंडपातन, वाक् पारुष्य (कठोर वचन बोलना) और पराया धन हरण करना ये सात काम एवं क्रोधसे उत्पन्न हुए व्यसन है। राजा को यह ज्ञान होना चाहिए कि इनमें पहला पहला व्यसन बहुत दुःखदायक होता है। जैसे– द्यूत(जुआ खेलना) की अपेक्षा मद्यपान(शराब पीना) अधिक कष्टदायक है।

व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते ।

व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यात्यव्यसनी मृतः।।53।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से उद्धृत है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ व्यसन को मृत्यु से भी अधिक कष्टदायक कहा गया है।

व्याख्या– व्यसन मृत्यु से भी अधिक कष्टप्रद माना गया है क्योंकि व्यसनी पुरुष मरकर नरक में जाता है और जो व्यक्ति व्यसन से दूर है वह शास्त्रोक्त कर्म के विरोधी व्यसन के अभाव में स्वर्ग में जाता है अर्थात् सुख को प्राप्त होता है। अतः राजा को व्यसनों में नहीं फंसना चाहिए।

मौलांछास्त्रविदः शूराँल्लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।

सचिवान् सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्।।54।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ कैसे मन्त्रियों को राजा नियुक्त करे अर्थात् मन्त्रियों की परीक्षाविधि के बारे में बताया गया है।

व्याख्या– वंशपरंपरा (पिता और पितामहादि के क्रम) से राजसेवक, शास्त्रों के ज्ञाता, शूरवीर, अच्छा निशाना लगाने वाले, श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न, तथा अच्छी तरह से परीक्षा किये हुए, सात या आठ मंत्रियों को राजा नियुक्त करें और इन्हीं की सभा में आठवाँ या नौवाँ राजा सभापति के रूप में स्वयं हो ।

अपि यत्सुकरं कर्म तदप्येकेन दुष्करम्।

विशेषतोऽसहायेन किन्तु राज्यं महोदयम्।। 55।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ राजा को सहायकों की आवश्यकता के कारण को स्पष्ट किया गया है।

व्याख्या– गृहस्थ के छोटे– छोटे और सरल काम भी एक पुरुष बडी मुश्किल से कर पाता है फिर महाफलदायक भारी भरकम राज्यकार्य को राजा बिना किसी की सहायता से अकेला कैसे कर सकता है? अर्थात् राजा को राज्यकार्य में सहायकों की आवश्यकता पडती ही है।

तैः सार्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम्।
स्थानं समुदयं गुप्तिं लब्धप्रशमनानि च ।। 56।।
प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ राजा को अपने मन्त्रियों के साथ कैसे मन्त्रणा (सलाह) करनी चाहिए इस पर विचार किया गया है।
व्याख्या– राजा उन विद्वान् मंत्रियों के साथ इन छःबातों पर विचार करे। सन्धि–विग्रह(मित्रता एवं विरोध), अपनी उन्नति, अपना स्थान, शत्रु से राज्य की रक्षा, अपनी सेना तथा कोश आदि की रक्षा, प्राप्त धन को सत्पात्रों को देना ।।

तेषां स्वं स्वमभिप्रायमुपलभ्य पृथक् पृथक्।
समस्तानां च कार्येषु विदध्याद् हितमात्मनः।।57।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। इस श्लोक में राजा को मन्त्रिपरिषद् की अच्छी तरह मन्त्रणा (सलाह) लेकर ही सभी कार्यों को करना चाहिए।

व्याख्या– सभी कार्यों में उन विद्वान् मन्त्रियों के पृथक् पृथक् अभिप्राय को जानकर जिसमें अपना हित हो उस काम को राजा करें।

सर्वेषां तु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता।

मन्त्रयेत् परमं मन्त्रं राजा षाड्गुण्यसंयुतम्।।58।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। इसमें कहा गया है कि राजा अपने परमविद्वान् मन्त्रियों के साथ छः विषयों (षाड्गुण्य) पर विचार करे।

व्याख्या– मंत्रियों में जो परमधार्मिक विद्वान् हो उनके साथ राजा सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और आश्रय इन छः विषयों सहित अत्यन्त गूढ मन्त्रणाओं पर विचार करे ।

नित्यं तस्मिन् समाश्वस्तः सर्वकार्याणि निःक्षिपेत्।

तेन सार्धं विनिश्चित्य ततः कर्म समारभेत्।। 59।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ कहा गया है कि राजा को अपने मन्त्रिपरिषद् पर विश्वास कर उन्हें राज्यसम्बन्धी कार्यों को सौंपना चाहिए ।

व्याख्या– विश्वास को प्राप्त होकर राजा उन विशिष्ट विद्वान् मन्त्रियों को राज्यसम्बन्धी सभी कार्य सौप दे और उनके साथ ही निश्चय कर सभी कार्यों का आरम्भ करे।

अन्यानपि प्रकुर्वीत शुचीन् प्राज्ञानवस्थितान्।

सम्यगर्थसमाहर्तृनमात्यान् सुपरीक्षितान्।।60।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ राजा को आवश्यकतानुसार अन्य मन्त्रियों (अमात्यों) की नियुक्ति के बारे में कहा गया है।

व्याख्या– आवश्यकता पडने पर अन्य भी पवित्रात्मा, बुद्धिमान्, निश्चित बुद्धि, पदार्थों का संग्रह करने में चतुर, अच्छी तरह से परीक्षित मन्त्रियों को राजा नियुक्त करे।

निवर्तेतास्य यावद्भिरितिकर्तव्यता नृभिः।

तावतोऽतन्द्रितान् दक्षान् प्रकुर्वीत विचक्षणान्।।61।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ राजा को आवश्यकतानुसार अन्य अधिकारियों की नियुक्ति के बारे में कहा गया है।

व्याख्या– जितने मनुष्यों से राज्यकार्य सिद्ध हो सके उतने आलस्यरहित, कुशल और अत्यन्त बुद्धिमान् अर्थात् राज्यसंचालन में सिद्धहस्त अधिकारियों को राजा नियुक्त करे।

तेषामर्थे नियुंजीत शूरान् दक्षान् कुलोद्गतान्।

शुचीनाकरकर्मान्ते भीरूनन्तर्निवेशने।।62।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ अमात्यों के सहयोगी अधिकारियों की नियुक्ति के बारे में कहा गया है।

व्याख्या– इन अमात्यों (मन्त्रियों) में से जितने शूरवीर, कुशल (चतुर), कुलीन और शुद्ध अर्थात् जो धन के लोभी न हो उन्हें धन की आय या बडे बडे कामों में नियुक्त करें जो उनमें भीरू (डरपोक) हों उन्हें भोजन, शयन तथा अन्तःपुर के कार्यों मे नियुक्त करें।

दूतं चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्।

इंगिताकारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कुलोद्गतम्।।63।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तम अध्याय से लिया गया है। जिसके रचयिता आचार्य मनु है। यहाँ प्रधान दूत की नियुक्ति के विषय में प्रतिपादन किया गया है।

व्याख्या– सभी शास्त्रों में विशारद(चतुर), नेत्रादि के संकेत, स्वरूप और हाव–भाव से दूसरे के हृदय की बात को जानने वाला, शुद्ध, कुशल (चतुर), श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न दूत को राजा नियुक्त करे।

अनुरक्तः शुचिर्दक्षः स्मृतिमान् देशकालवित्।

वपुष्मान् वीतभीर्वाग्मी दूतो राज्ञः प्रशस्यते।।64।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दूत के आठ गुणों का वर्णन बडे ही सुन्दर ढंग से किया गया है। इन आठ गुणों से युक्त दूत को ही राजा नियुक्त करे ऐसा कहा गया है।

व्याख्या– अपने में अनुरागी, पवित्र, चतुर, अच्छी स्मृति वाला, देश काल का ज्ञाता, स्वरूपवान् , निडर, और युक्तिपूर्वक वचन बोलने वाला, दूत प्रशंसा पाता है।

अमात्ये दण्ड आयत्तो दण्डे वैनायिकी क्रिया।

नृपतौ कोशराष्ट्रे च दूते सन्धिविपर्ययौ।।65।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दूत के अधिकार में रहने वाले विषयों का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– मन्त्री के अधीन दण्ड और दण्ड के अधीन सुशिक्षा(विनय) और राजा के अधीन देश(राज्य) और कोश (खजाना) तथा दूत के अधीन किसी से सन्धि और विग्रह(मेल या विरोध) कराना होता है।

दूत एव हि संधत्ते भिनत्त्येव च संहतान्।

दूतस्तत्कुरुते कर्म भिद्यन्ते येन वा न वा।।66।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दूत के कार्यों के विषय में प्रतिपादन किया गया है।

व्याख्या– क्योंकि दूत ही विरोधी(शत्रु) राजाओं से संधि और मिले हुए(मित्र) राजाओं में भेद कर सकता है। दूत वह काम कर सकता है जिससे शत्रुपक्ष के लोगों में भी फूट पड जाय ।

स विद्यादस्य कृत्येषु निगूढेङ्गितचेष्टितैः।

आकारमिंगितं चेष्टां भृत्येषु च चिकीर्षितम्।। 67।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दूत के कार्यों का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– वह दूत शत्रु राजा के असंतुष्ट या विरोधी लोगों और कर्मचारियों में गुप्त संकेतों एवं चेष्टाओं से शत्रुराजा के हाव भाव , चेष्टा को तथा उसके अभिलषित कार्य या उसकी इच्छाओं को जाने।

बुद्ध्वा च सर्वं तत्त्वेन परराजचिकीर्षितम्।

तथा च प्रयत्नमातिष्ठेद् यथात्मानं न पीडयेत्।।68।।

प्रसंगः– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दूत के कार्यों का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– वह दूत शत्रु राजा की सभी इच्छाओं को ठीक तरह से जानकर ऐसा प्रयास करे जिससे अपने को पीडा न हो।

जांगलं सस्यसम्पन्नमार्यप्रायमनाविलम्।

रम्यमानतसामन्तं स्वाजीव्यं देशमावसेत्।।69।।

प्रसंग–प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास योग्य देश (स्थान) का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– जिस स्थान में उपयुक्त जल बरसता हो अर्थात् बाढ न आती हो, खुली हवा और तेज धूप का ताप हो, धान्य (अन्नादि) बहुत पैदा होता हो हरा भरा स्थान हो, जो श्रेष्ठ लोगों का निवास हो, जहाँ की प्रजा रोग–शोकादि से रहित हो, रमणीय स्थान हो, जिसके सामन्त राजा का आदर करते हो तथा जो देश आजीविकाओं से सम्पन्न हो ऐसे देश में राजा अपने रहने का स्थान बनाए।

धन्वदुर्गं महीदुर्गमब्दुर्गं वार्क्षमेव वा।

नृदुर्गं गिरिदुर्गं वा समाश्रित्य वसेत् पुरम्।।70।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास योग्य छः प्रकार के दुर्गो (किला) का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– धन्वदुर्ग (जिसके चारों ओर जल न हो अर्थात् मरुस्थल में बना हुआ किला)

महीदुर्ग (पृथ्वी के अन्दर तहखाने या गुफा के रूपमें बना हुआ किला)

अब्दुर्ग (जिसके चारों ओर जल हो अर्थात् जलदुर्ग)

वार्क्षदुर्ग(अर्थात् वृक्षदुर्ग जो घने वृक्षों से घिरा हो)

नृदुर्ग(जो दुर्ग चारों ओर से सेना से संरक्षित हो)

गिरिदुर्ग(पर्वत पर या पर्वतों से घिरा हुआ दुर्ग)

इन दुर्गों में राजा निवास करे जहाँ शत्रुसेना न जा सके।

सर्वेण तु प्रयत्नेन गिरिदुर्गं समाश्रयेत्।

एषां हि बाहुगुण्येन गिरिदुर्गं विशिष्यते।।71।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास योग्य छः प्रकार के दुर्गो (किला) में गिरिदुर्ग की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है।

व्याख्या– जिस दुर्ग(किले) के चारों ओर पर्वत हों अर्थात् गिरिदुर्ग में राजा यत्नसहित निवास करे । क्योंकि बाकि दुर्गों की अपेक्षा गिरिदुर्ग बहुत गुणों वाला तथा श्रेष्ठ माना गया है। उसमें शत्रु आसानी से प्रवेश नहीं कर सकता । शत्रुसेना को शिला आदि की वर्षा द्वारा नष्ट किया जा सकता है।

त्रीण्याद्यान्याश्रितास्त्वेषां मृगगर्ताश्रयाऽप्सराः।

त्रीण्युत्तराणि क्रमशःप्लवंगमनरामराः।।72।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास योग्य छः प्रकार के दुर्गो (किला) के आश्रित जीवों वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रथम तीन दुर्गों मे क्रमशः हिरन, चूहे और जल के जीव मगरमच्छ आदि रहते हैं। अन्तिम तीनों दुर्गों में क्रमशः बन्दर मनुष्य और देवता रहते है। अर्थात् धन्वदुर्गमें मृगादि से, महीदुर्ग चूहों से, जलदुर्ग मगरमच्छ आदि जलचर जीवों से, वृक्षदुर्ग वानरों से, नृदुर्ग मनुष्यों से और गिरिदुर्ग देवताओं से आश्रित होता है।

यथा दुर्गाश्रितानेतान् नोपहिंसन्ति शत्रवः।

तथारयो न हिंसन्ति नृपं दुर्गसमाश्रितम्।।73।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास योग्य छः प्रकार के दुर्गो (किला) की विशेषता का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– जैसे दुर्गमें रहने वाले मृग आदि को सिंह आदि शत्रु नहीं मार सकते उसी प्रकार दुर्गमें रहने वाले राजा को भी शत्रु नहीं मार सकते।।

एकः शतं योधयति प्राकारस्थो धनुर्धरः।

शतं दशसहस्राणि तस्माद् दुर्गं विधीयते।।74।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दुर्गो (किला) के महत्ता (उपयोगिता) का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– किले के प्राकार (परकोटे) पर बैठा हुआ एक ही धनुर्धारी वीर सौ योद्धाओं के साथ युद्ध कर सकता है और सौ योद्धा दस हजार योद्धाओं के साथ युद्ध कर सकते है। इसलिए शास्त्रकारों ने दुर्ग बनाना कहा है।

तत्स्यादायुधसंपन्नं धनधान्येन वाहनैः।

ब्राह्मणैः शिल्पिभिर्यन्त्रैर्यवसेनोदकेन च ।।75।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ दुर्ग (किला) में सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होनी चाहिए ऐसा वर्णन किया गया है।

व्याख्या– वह दुर्ग (किला) खड्ग आदि शस्त्रों से, धनधान्य, अश्वादि वाहनों से, मन्त्री पुरोहितों से, कारीगरों और यन्त्रों से, चारा घास तथा जलादि से पूर्ण रहना चाहिए।

तस्य मध्ये सुपर्याप्तं कारयेद् गृहमात्मनः।

गुप्तं सर्वर्तुकं शुभ्रं जलवृक्षसमन्वितम्।।76।।

प्रसंग– प्रस्तुत श्लोक मनुस्मृति के सप्तमाध्याय से लिया गया है। जिसके प्रणेता महर्षि मनु है। यहाँ राजा के निवास गृह का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– उस दुर्ग के मध्य में जल, वृक्ष, पुष्पादि से युक्त, सभी प्रकार से सुरक्षित, सभी ऋतुओं में सुखकारक, श्वेत रंग का अपने लिए घर बनवाए जिसमें सब राजकार्य का निर्वाह हो।

तदध्यास्योद्वहेद् भार्यां सवर्णां लक्षणान्विताम्।

कुले महति संभूतां हृद्यां रूपगुणान्विताम्।।77।।

प्रसंग– यहाँ राजा के विवाह योग्य भार्या का वर्णन किया गया है।

व्याख्या– राजा उस भवन में निवास करके अपने समान वर्ण वाली, शुभ्रलक्षणा, उच्च कुल में उत्पन्न मनोहर गुणों वाली स्त्री के साथ विवाह करे।

पुरोहितं च कुर्वीत वृणुयादेव चर्त्विजम्।

तेऽस्य गृह्याणि कर्माणि कुर्युर्वैतानिकानि च ।।78।।

प्रसंग– यहाँ राजा द्वारा पुरोहित और ऋत्विज् का वरण करना कहा है। ताकि वे (पुरोहित और ऋत्विज्) शान्तिकर्म और यज्ञकर्म कर सके।

व्याख्या– राजा रीति के अनुसार एक पुरोहित बनाए और एक ऋत्विज् का वरण करे । वे ऋत्विज् और पुरोहित इस राजा के (गृह्य) शान्ति कर्म और (वैतानिक) यज्ञकर्म को करावे।

यजेत् राजा क्रतुभिर्विविधैराप्तदक्षिणैः।

धर्मार्थं चैव विप्रेभ्यो दद्याद् भोगान् धनानि च ।।79।।

प्रसंग– यहाँ राजा द्वारा विद्वान् ब्राह्मणों को यज्ञादि करवाने पर सम्मान हेतु विविध भोग्य वस्तुओं के दान के बारे में कहा गया है।

व्याख्या– पूर्ण दक्षिणा वाले अनेक प्रकार के यज्ञों को राजा किया करे। और धर्मके लिए विद्वान् ब्राह्मणों को भोजन, वस्त्र और धनादि दे।

सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद् बलिम्।

स्याच्चाम्नायपरो लोके वर्तेत पितृवन्नृषु।।80।।

प्रसंग– यहाँ वेदादि शास्त्रों के अनुसार षष्ठांश कर(टैक्स) प्रजा राजा को दे तथा राजा उस कर को प्रजा के कल्याण हेतु लगावे ऐसा कहा गया है।

व्याख्या– राजा अपनी प्रजा से वार्षिक कर (टैक्स) मन्त्रियों द्वारा वेदों के अनुसार ग्रहण करे। और पिता के समान प्रजा पर प्रीति रखे।

अध्यक्षान् विविधान् कुर्यात् तत्र तत्र विपश्चितः।

तेऽस्य सर्वाण्यवेक्षेरन् नृणां कार्याणि कुर्वताम्।।81।।

प्रसंग – यहाँ राजा द्वारा विविध विभागों के अध्यक्षों की नियुक्ति के बारे में कहा गया है।

व्याख्या– राजा प्रतिभाशाली, योग्य विद्वान् अध्यक्षों को आवश्कतानुसार विभिन्न विभागों में नियुक्त करे। वे विभागों के अध्यक्ष राजाके द्वारा नियुक्त अन्य सभी अपने अधीन कार्य करने वाले कर्मचारियों का अच्छी तरह निरीक्षण करे। जैसे – सेनाध्यक्ष सम्पूर्ण सेना का निरीक्षण करे इत्यादि।

आवृत्तानां गुरुकुलाद् विप्राणां पूजको भवेत्।

नृपाणामक्षयो ह्येष निधिर्ब्राह्मोऽभिधीयते।।82।।

प्रसंग– यहाँ राजा को स्नातक विद्वानों का सत्कार करना चाहिए ऐसा कहा गया है।

व्याख्या– गुरुकुल से वेदविद्या पढकर गृहस्थाश्रम धारण करने की इच्छा से लौटे हुए विद्वान् ब्राह्मणों का राजा नियमपूर्वक धन–धान्य से सत्कार करे क्योंकि यह ब्राह्मणों को दिये धन–धान्य का यज्ञ है यही राजा की अक्षय निधि है क्योंकि इससे राज्य में विद्या की उन्नति होती है।

न तं स्तेना च चामित्रा हरन्ति न च नश्यति ।

तस्माद् राज्ञा निधातव्यो ब्राह्मणेष्वक्षयो निधिः।।83।।

प्रसंग– यहाँ ब्राह्मणों को धन–धान्यादि का दान अक्षयनिधि (कभी नष्ट न होने वाला खजाना) कहा है ।

व्याख्या– ब्राह्मणों को दिये हुए उस अक्षयनिधि को चोर और शत्रु नहीं हर सकते और न ही वह निधि कभी नष्ट होती है । इसलिए राजा को ब्राह्मणों में अक्षयनिधि स्थापित करनी चाहिए अर्थात् धन–धान्यादि का दान देना चाहिए।

न स्कन्दते न व्यथते न विनश्यति कर्हिचित्।

वरिष्ठमग्निहोत्रेभ्यो ब्राह्मणस्य मुखे हुतम्।।84।।

प्रसंग– यहाँ ब्राह्मणों को दिये हुए दान को अक्षय कहा गया है।

व्याख्या– ब्राह्मणों के मुखमें होम किया हुआ पदार्थ अर्थात् ब्राह्मणों को दिया हुआ दान अग्निहोत्र करने से भी श्रेष्ठ फलदायक है क्योंकि वह न तो व्यर्थ गिरता है, न सूखता है और न कभी नष्ट होता है। जबकि अग्निहोत्र में दिया गया आहुति रूपी दान कुछ व्यर्थ बिखर जाता है, कुछ सूख जाता है और कुछ जलकर नष्ट हो जाता है।

सममब्राह्मणे दानं द्विगुणं ब्राह्मणब्रुवे।

प्राधीते शतसाहस्रमनन्तं वेदपारगे।।85।।

प्रसंग– यहाँ वेदों में पारंगत विद्वान् ब्राह्मण को दान देने से अनन्तफल मिलता है ऐसा वर्णन है।

व्याख्या– ब्राह्मण वर्ण से भिन्न व्यक्ति (क्षत्रियादि) को दान देने में समान फल मिलता है अर्थात् उस दान का न अच्छा और बुरा फल मिलकर वह बराबर रहता है। ब्राह्मणब्रुव अर्थात् जो कर्महीन हो और अपने आपको ब्राह्मण कहता हो उसे दान देने से दुगुणा फल मिलता है। विद्यार्थी को देने से लाख गुणा फल मिलता है तथा वेदों में पारंगत विद्वान् ब्राह्मण को दान देने से अनन्त गुणा फल मिलता है।

पात्रस्य हि विशेषेण श्रद्दधानतयैव च ।

अल्पं वा बहु वा प्रेत्य दानस्यावाप्यते फलम्।।86।।

प्रसंग– यहाँ सुपात्र को दिये हुए दान के फल का प्रतिपादन किया गया है।

व्याख्या– विद्या और तप से युक्त पात्र की विशेषता से अर्थात् दान लेने वाला जैसा सुपात्र है उसके अनुसार और श्रद्धा से दान देने पर दान देने का थोडा या ज्यादा फल परलोक में अवश्य ही प्राप्त होता है। अतः सुपात्र को दान देना उचित है।

समोत्तमाधमे राजा त्वाहूतः पालयन् प्रजाः।

न निवर्तेत संग्रामात् क्षात्रं धर्ममनुस्मरन्।।87।।

प्रसंग– यहाँ राजा के लिए क्षात्र धर्म का पालन करते हुए युद्ध से विमुख न होना कहा गया है।

व्याख्या– जब कभी प्रजा का पालन करने वाले राजा को अपने से तुल्य (समान), उत्तम और अधम(छोटा) युद्ध के लिए आह्वान करे तो क्षत्रियों के धर्म का स्मरण करके युद्ध में जाने से कभी विमुख न हो। अर्थात् शूरवीरता से उनसे युद्ध करे जिससे वह विजयी हो।

संग्रामेष्वनिवर्तित्वं प्रजानां चैव पालनम्।

शुश्रूषा ब्राह्मणानां च राज्ञां श्रेयस्करं परम्।।88।।

प्रसंग– यहाँ राजा के लिए कल्याणकारक तीन बातें कही गयी है।

व्याख्या– संग्राम (युद्ध) से मुख न मोडना, प्रजा का पालन करना और ब्राह्मणों की सेवा करना ये तीनों बातें राजा के लिए परम कल्याण करने वाली कही गयी हैं।

आहवेषु मिथोऽन्योऽन्यं जिघांसन्तो महीक्षितः।

युध्यमानाः परं शक्त्या स्वर्गे यान्त्यपराङ्मुखाः।।89।।

प्रसंग– यहाँ राजा को वीरता के साथ युद्ध करने का निर्देश किया गया है।

व्याख्या– जो राजा युद्धमें परस्पर एक–दूसरे को मारने की इच्छा करते हुए, पूरी शक्ति से युद्ध करते हुए, युद्ध से विमुख(पराङ्मुख) नहीं होते हैं । वे उत्कृष्ट स्वर्ग में जाते हैं अर्थात् सुखको प्राप्त करते हैं।

न कुटैरायुधैर्हन्याद् युध्यमानो रणे रिपून्।

न कर्णिभिर्नापि दिग्धैर्नाग्निज्वलिततेजनैः।।90।।

प्रसंग– यहाँ राजा युद्धमें किन अस्त्र–शस्त्रों का प्रयोग न करे इसका वर्णन है।

व्याख्या– रणभूमि में युद्ध करता हुआ राजा शत्रुओं को कूट आयुधों (धोखा युक्त शस्त्रों से अर्थात् बाहर लकडी हो उसके भीतर विषैला लोहे आदि का शस्त्र छिपा हो) से न मारे। कर्णी के आकार के बाणों से (अर्थात् जो आगे से नुकीले और मध्य से चौडे होने से लगने के बाद निकलते नहीं) और जिनमें विष मिला हो तथा जिनका फलक अग्नि से तपाया हुआ हो ऐसे बाणों से शत्रुओं को न मारे।

न च हन्यात् स्थलारूढं न क्लीबं न कृतांजलिम्।

न मुक्तकेशं नासीनं न तवास्मीति वादिनम्।।91।।

न सुप्तं न विसन्नाहं न नग्नं न निरायुधम्।

नायुध्यमानं पश्यन्तं न परेण समागतम्।।92।।

नायुध्यव्यसनप्राप्तं नार्त्तं नातिपरिक्षितम्।

न भीतं न परावृत्तं सतां धर्ममनुस्मरन्।।93।।

प्रसंग– यहाँ तीन श्लोकों में राजा युद्ध में किन किन व्यक्तियों को न मारे इसका वर्णन है।

व्याख्या– रथ छोडकर भूमि पर खडे हुए व्यक्ति को, नपुंसक को, हाथ जोडकर खडे हुए को, जिसके सिर के बाल खुल गये हो, जो युद्धसे हटकर आसन पर बैठ गया हो तथा मैं आपकी शरणमें हूं ऐसा कहकर आत्मसमर्पण करने वाले शत्रु को न मारे।। 91।।

सोते हुए को, बेहोश हुए को, नंगे को, शस्त्रहीन को, युद्ध देखने के लिए आये हुए को और दूसरे के साथ युद्ध करते हुए शत्रु को राजा न मारे।।92।।

जिसका हथियार टूट गया हो, रोगी को, शत्रु के शस्त्रों से जो घायल हो गया हो, युद्ध से डरे हुए को, युद्ध से भागते हुए शत्रुको श्रेष्ठ क्षत्रियों के धर्म को स्मरण करते हुए राजा न मारे।।93।।

यस्तु भीतः परावृत्तः संग्रामे हन्यते परैः।

भर्तुर्यद् दुष्कृतं किंचित् तत्सर्वं प्रतिपद्यते।।94।।

प्रसंग– यहाँ युद्ध से पलायन करने वाले को अपराधी कहा गया है।

व्याख्या– जो योद्धा युद्ध से भयभीत होकर पीछे भागता है और शत्रुओं से मारा जाता है वह अपने राजा के सभी पापों को प्राप्त करता है।

यच्चास्य सुकृतं किंचिदमुत्रार्थमुपार्जितम्।

भर्ता तत्सर्वमादत्ते परावृत्तहतस्य तु।।95।।

प्रसंग– यहाँ युद्ध से डरकर भागे हुए के सभी पुण्य को राजा प्राप्त करता है ।

व्याख्या– युद्ध से डरकर भागने वाले (पराङ्मुख) के जो कुछ भी परलोक के लिये संचित पुण्य है वे सारे पुण्य राजा को प्राप्त होते है।

रथाश्वं हस्तिनं छत्रं धनं धान्यं पशून् स्त्रियः।

सर्वद्रव्याणि कुप्यं च यो यज्जयति तस्य तत्।।96।।

प्रसंग– यहाँ युद्ध से जीते हुए धनादि के अधिकारी का वर्णन है।

व्याख्या– रथ, घोडे, हाथी, छत्र, धन–धान्य, पशु, स्त्री और गुड, घृत तैलादि सब द्रव्य जो जीते उस पर उसी का अधिकार होता है।

केवल सोने और चाँदी पर राजा का अधिकार होता है।

राज्ञश्च दद्युरुद्धारमित्येषा वैदिकी श्रुतिः।

राज्ञा च सर्वयोधेभ्यो दातव्यमपृथग्जितम्।।97।।

प्रसंग– यहाँ युद्ध में जीते हुए उत्कृष्ट धन (सोना–चाँदी) राजा को देने का वर्णन है।

व्याख्या– जीते हुए पदार्थों में सोना–चाँदी आदि उत्तम पदार्थ राजा को अर्पित कर देने चाहिए – ऐसी वेद की श्रुति है। और जो धन सबने मिलकर जीता है उस धन को राजा पुरुषार्थ के अनुसार सब योद्धाओं को बाँट दे।

एषोऽनुपस्कृतः प्रोक्तो योधधर्मः सनातनः।

अस्माद् धर्मान्न च्यवेत क्षत्रियो घ्नन् रणे रिपून्।।98।।

प्रसंग– यहाँ राजा के लिए राजधर्म का पालन आवश्यक बताया गया है।

व्याख्या– यह निन्दारहित योद्धाओं का सनातन धर्म कहा है। क्षत्रिय राजा या राजधर्म का पालन करने वाला पुरुष संग्राम में शत्रुओं को मारता हुआ इस धर्म से कभी भी विचलित न हो।

अलब्धं चैव लिप्सेत लब्धं रक्षेत् प्रयत्नतः।

रक्षितं वर्धयच्चैव वृद्धं पात्रेषु निःक्षिपेत्।।99।।

प्रसंग– यहाँ राजा द्वारा चिन्तनीय बातों का वर्णन है।

व्याख्या– जो वस्तु नहीं मिली है उसको प्राप्त करने की इच्छा करे, प्राप्त वस्तु की प्रयत्न से रक्षा करे उसको बढावें (उन्नति करे)और उन्नत या बढी हुई वस्तु को शास्त्रानुसार सुपात्रों को दे देवे ।

एतच्चतुर्विधं विद्यात् पुरुषार्थप्रयोजनम्।

अस्य नित्यमनुष्ठानं सम्यक्कुर्यादतन्द्रितः।।100।।

प्रसंग– यहाँ राजा द्वारा चिन्तनीय बातों का वर्णन है।

व्याख्या– राजा के पुरुषार्थ के प्रयोजन भी चार प्रकार के है– (जो उपरोक्त श्लोक में कहे गये हैं) राजा आलस्य को छोडकर नित्य भली भाँति इसका अनुष्ठान करे।